جون ۲۰۰۹ء

ماہنامہ **شعاعِ عمل** لکھنؤ

قَالَ اللّٰهُ تَبَارَکَ وَتَعَالیٰ قَدْ جَاءَ کُمْ مِنَ اللّٰهِ نُوْرٌ وَکِتَابٌ مُبِیْنٌ

بے شک تمہارے پاس اللہ کی طرف سے نور آیا ہے اور روشن کتاب





موسسۂ نورِ ہدایت، حسینیہ غفرانمآبؒ، چوک، لکھنؤ۔۳

R.N.I. No. UPBIL/2004/13526
Postel Regd.No. SSP/LW/NP-75/2008-10
P.O. Chowk, Dispatch Date: 2 & 6 of Every Month

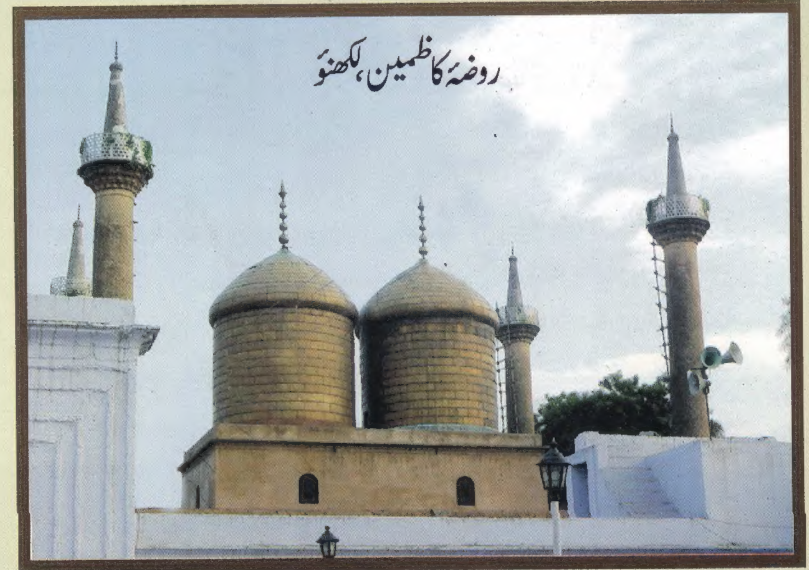
SHUA-E-AMAL

Lucknow

June 2009

शुआ-ए-अमल

हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका लखनऊ





NOOR-E-HIDAYAT FOUNDATION

Imambara Ghufran Maab, Chowk, Lucknow-3 (U.P.) INDIA, Phone : 2252230

वर्ष-5

R.N.I. No. UPBIL/2004/13526
Postal Regd No-SSP/LW/NP-75/2008-10
P.O. Chowk. Dispatch Date: 2 & 6 of every month

अंक 12

जून - 2009

नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन की

हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका

शुआ-ए-अमल

''लखनऊ''

संरक्षक

मौलाना सै. कल्बे जवाद नक़वी साहब

सम्पादक

सै. मुस्तफ़ा हुसैन नक़वी 'असीफ़' जायसी

वार्षिक - 200 रु

मिलने का पता

क़ीमत - 20 रु

नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन

इमामबाड़ा हज़रत ग़ुफ़रानमआब मौलाना कल्बे हुसैन रोड
चौक लखनऊ - 3 (उ.प्र.) भारत। फोन न० 0522-2252230

सै. कल्बे जवाद नक़वी प्रिन्टर, पब्लिशर और प्रोपराइटर ने मासिक शुआ-ए-अमल (उर्दू, हिन्दी) निज़ामी आफ़सेट प्रेस विक्टोरिया स्ट्रीट लखनऊ से छपवाकर आफ़िस नूर-ए-हिदायत फ़ाउण्डेशन इमामबाड़ा ग़ुफ़रानमआब मौलाना कल्बे हुसैन रोड लखनऊ-3 से प्रकाशित किया। सम्पादक : सै० मुस्तफा हुसैन नक़वी 'असीफ जाएसी'।

मजलिसे इदारत

- तज़हीब नगरौरी
- सै० सुफ़यान अहमद नदवी
- मिर्ज़ा हुमायूँ क़दर
- ख़ान मुहम्मद सादिक़
- मुहम्मद सरवर रिज़वी
- ख़ुर्शीद अली रिज़वी
- तनवीर नगरौरी
- सै० कामिल रज़ा काज़मी
- सै० मुहम्मद अब्बास रिज़वी

R.N.I. No.
UPBIL/2004/13526

Postal Regd. No.
SSP/LW/NP-75/2008-10

WEBSITE:
www.noorehidayat.com
www.al-ijtihaad.com

E_mail:
noorehidayat@yahoo.com
noorehidayat@gmail.com

ज़रे सालाना

1- यूरोप, अमरीका, कनाडाः
80 अमरीकी डालर
2- ख़लीजी मुमालिकः
60 अमरीकी डालर
3- एशिया, पाकिस्तानः
40 अमरीकी डालर
4- पाकिस्तान ज़मीनी डाकः
20 अमरीकी डालर

लाइफ़ मेम्बरशिपः 4000/-

फ़ेहरिस्ते मज़ामीन

जून-2009ई०

जमादिस्सानी - रजबुल मुरज्जब 1430हि०

इमाम अली[अ०] ने फ़रमायाः

1- अगर नमाज़ पढ़ने वाले को ये मालूम हो जाए कि ख़ुदा की क्या-क्या रहमतें उस पर नाज़िल हो रही हैं तो वह कभी सजदे से सर न उठाये।

2- नेक काम करने में देर न करो जैसे ही मौक़ा मिले फ़ौरन कर डालो।

3- वह हमारा शिया नहीं है जो ऐसे काम करे जिनसे हमने रोका हो।

4- बेहूदा और पस्त लोगों से दूर रहो क्योंकि उन्हें ख़ुदा का ख़ौफ़ नहीं होता है।

मक़सूदे काबा

हज़रत अली की काबे में विलादत और अक़्लों की हैरतअंगेज़ ठोकरें

आयतुल्लाहिलउज़्मा सैय्यिदुलउलमा सै० अली नक़ी नक़वी ताबा सराह

वाक़िआ अपनी नौइयत में निराला हो तो कुछ ताज्जुब नहीं कि इसके रुमूज़ में सतही नज़रें ठोकरें खाती फिरें और नाक़िस अक़्लें इसकी तह तक पहुँचने की फ़िक्र में अन्धेरों के ऊबड़-खाबड़ रास्तों के अन्दर हाथ पाँव मारती रहें और फिर जब कि इस ग़ौरो-फ़िक्र के अन्दर कोई ज़ाती जज़्बा भी काम कर रहा हो।

जिस तरह पहली तारीख़ के चाँद पर ग़ौर करने वाला शख़्स कभी-कभी अपने ख़यालों की मदद से बहुत से ऐसे चाँद देख लेता है जिनका वजूद नहीं है और कभी यक़ीन भी कर लेता है कि बेशक मैंने चाँद देखा हालांकि चाँद का पता नहीं और किसी के इन्तिज़ार में दरवाज़े की खटखटाहट पर कान लगाने वाला हर बार इसका एहसास करता है कि कोई पुकार रहा है या दरवाज़ा खटखटा रहा है हालांकि ऐसा नहीं है, इसी तरह किसी ख़ास जज़्बे के तहत अक़्ल पर ज़ोर देने वाला बहुत सी बातों को हक़ीक़त के लिबास में देखने लगता है हालांकि उनको हक़ीक़त से दूर का भी ताल्लुक़ नहीं है।

बेशक जिस तरह पहले का इलाज ये है कि वह नज़र को जमा कर देखे तो मालूम हो जायेगा कि वह जिसको चाँद समझ रहा है वह एक वहम है और पूरे तौर पर ध्यान से सुने तो मालूम हो कि उसकी सुनी हुई आवाज़ ख़ुद उसी के कानों की पैदावार है इसी तरह उसकी तरकीब ये है कि वह अपने ज़हन को हर तरह के जज़्बात से साफ़ करके हक़ीक़त पर बग़ैर किसी लगावट के ग़ौर करे और अपने ख़यालात का अक़्ली व नक़्ली मुसल्लमा मुक़द्दमात के मेयार के मुताबिक़ जाएज़ा ले तो मालूम हो जाएगा कि जिसे वह हक़ीक़त समझता था वह ख़याल का धोका है।

13 रजब और अमीरुलमोमिनीन[अ०] की विलादते ख़ान-ए-काबा का वाक़िआ ख़ुद अपनी नौइयत में बेनज़ीर था और फिर आम एतेक़ादात ने ज़ाहिरी तरतीबे ख़िलाफ़त को तरतीबे फ़ज़ीलत का मेयार क़रार देकर ज़हनियतों में जो जुमूद पैदा कर दिया उसका नतीजा ये था कि अमीरुलमोमिनीन[अ०] की हर फ़ज़ीलत पर जो हज़रत की ज़ात से मख़सूस है इसी जज़्बे के तहत में नज़र की गई कि वह अपने ज़ाती ख़यालात व जज़्बात में रख़्नाअन्दाज़ है इसलिए कोशिश से ऐसे वजूह की तलाश की जाए जो इस फ़ज़ीलत को पामाल या कम से कम मशकूक बना देने का ज़रिया हो सकें चुनान्चे विलादते अमीरुलमोमिनीन के बारे में भी तरह-तरह के एतेराज़ पेश करके पर्दा डालने की कोशिश की जाती है जिन पर इस्लामी हदीसों और सीरत की रौशनी में मुसन्निफ़ाना नज़र डालना तहक़ीक़ पसन्द इन्सान का फ़र्ज़ है।

पहला एतेराज़
काबा के सिलसिले में गुस्ताख़ी

''अमीरुलमोमिनीन[अ०] की काबे में विलादत के वक़्त काबा क़िब्ला न था, बुतख़ाना था तो एक बुतख़ाने में पैदा होना कोन सी इज़्ज़त की बात है?''

इस एतेराज़ की जो हालत है वह हक़ीक़त में अल्लाह के घर ख़ाना काबा की तौहीन और उसकी अज़मत व बड़ाई को कम करने के लिए है।

एतेराज़ से साफ़ ज़ाहिर है कि काबे को जो कुछ इज़्ज़त हासिल हुई है वह उसके क़िब्ला होने की वजह से

लेकिन ये ख़याल तारीख़ व हदीस और इस्लामी आसार न जानने की बुनियाद पर है। मक्का की ज़मीन का ये पाक घर जिसका नाम काबा है, अपने एहतेराम व बड़ाई में किसी ख़ास वक़्त व ज़माने का पाबन्द नहीं है बल्कि पैदाईश के पहले ही दिन से इसकी बड़ाई और शान भी महफ़ूज़ थी। वह वक़्त कि जब बनी आदम का वजूद न था और काएनात का पन्ना इन्सान के नक़्श से सादा था उसी वक़्त ये घर अपनी बड़ाई और इज़्ज़त में ख़ास निशान का मालिक था। और इसी वजह से जब बनी आदम का वजूद हुआ तो उनके लिए तवाफ व इबादत के लिये यही घर चुना गया चुनानचे क़ुर्आन मजीद में इरशाद होता है:

"यक़ीन जानो कि सबसे पहला घर जो बनी आदम के लिए क़रार दिया गया वह घर है जो मक्का में है, वह मुबारक है और तमाम आलम की हिदायत (की वजह) है। इसमें खुली हुई निशानियाँ हैं जैसे मक़ामे इब्राहीम[अ०] जो शख़्स इसमें दाख़िल हो जाए वह अमान में है और ख़ुदा के लिए लोगों पर उस घर का हज वाजिब है, उस शख़्स पर जो इसकी ताक़त रखता हो और जो शख़्स कुफ्र को चुने (तो चुने) ख़ुदा तमाम आलम से बेनियाज़ है।" (सूर-ए-आले इमरान 96-97)

तफ़्सीरे बैज़ावी में जो अहलेसुन्नत की मुस्तनद किताब है, इस आयत की तफ़सीर करते हुए लिखा है:-

"ये सबसे पहला घर है जिसको आदम ने तामीर किया लेकिन तूफ़ाने नूह में वह बेनिशान हो गया फिर हज़रत इब्राहीम ने इसकी तामीर की और बाज़ ने कहा है कि इस जगह पर हज़रत आदम ने पहले एक घर था जिसका नाम था "ज़राह" और फ़रिश्ते उसका तवाफ किया करते थे, जब आदम[अ०] ज़मीन पर उतारे गये तो उनको हुक्म हुआ कि उसका हज करें और उसके पास तवाफ करें और तूफ़ाने नूह में चौथे आसमान पर उठा लिया गया कि आसमान के फ़रिश्ते उसका तवाफ़ करें।"

(तब-ए-इस्लाम्बोल, पेज-18)

दूसरी आयत:

और जबकि कहा इब्राहीम ने परवरदिगार इस शहर को अमन की जगह बना दे और मुझको और मेरी औलाद को बचा इस बात से कि हम बुतों की पूजा-पाठ करें। परवरदिगार! ये बहुत बहुत लोगों की गुमराही की वजह बनें है तो जो शख़्स मेरी पैरवी करे वह मुझ से है और जो मेरी नाफ़रमानी करे तो मग़फ़िरत व रहम तेरा काम है। परवरदिगार मैंने अपनी औलाद में से कुछ को बसाया है ऐसी वादी में जो पैदावार वाली नहीं है तेरे पाक घर के पास, ऐ ख़ुदा ताकि ये नमाज़ को क़ायम करें। अब तो कुछ लोगों के दिलों को उनकी तरफ मोड़ दे और उनको मेवों के साथ रोज़ी पहुँचा इसलिए कि ये तेरा शुक्र अदा करें।"

अल्लामा बैज़ावी इस आयत की तफ़सीर में लिखते हैं:-

"तेरे पाक घर के पास यानी वह घर जिससे तअर्रुज़ को और जिसकी बेअदबी को तूने हराम क़रार दिया है या जो हमेशा से इज़्ज़तो एहतेराम वाला रहा है कि बड़े-बड़े ज़ालिम इससे डरते थे या तूफ़ाने नूह[अ०] को इससे रोक दिया गया कि इस से पार न पा सका इसी वजह से इसका नाम अतीक़ हुआ यानी ये तूफ़ान से आज़ाद किया गया है।"

इन तीनों आयतों की तफ़सीर से कुछ बातें सामने आती हैं।

1- काबा दुनिया के मकानों में सबसे पहले पैदा हुआ।
2- वह ख़ुदा की तरफ़ से बरकत वाला बनाया गया है।
3- आदम को सबसे पहले इसके तवाफ और हर का हुक्म हुआ और तूफ़ान के ज़माने में फ़रिश्ते इसका तवाफ़ करते रहे।
4- हज़रत इब्राहीम[अ०] की दुआ थी "इन्द बैइतिकल मुहर्रम" तेरे पाक घर के पास" इससे ज़ाहिर है कि ख़लीलुल्लाह के ज़माने से काबा का एहतेराम ख़ुद से साबित है।
5- तूफ़ाने नूह[अ०] जो सारी दुनिया में था वह ख़ुदा के हुक्म से उस जगह से अलग था और काबा उससे बचा हुआ था।

इसके अलावा काबे की तामीर जिस एहतेमाम और जिन हाथों से हुई वह काबे की बड़ाई और अज़मत को साबित करने के लिए बहुत काफ़ी है।

सबसे पहले इस घर के बनाने वाले मुक़र्रब फ़रिश्ते हैं उन्होंने ख़ुदा के हुक्म से आकर इसकी तामीर की जिसका बयान अल्लामा क़ुतुबुद्दीन हनफ़ी की

किताबुल-अअ्लाम बि-अअ्लाम बैतिल्लाहिल हराम' (मतबूआ मिस्र) पेज-13 में मौजूद है।

दूसरी तामीर हज़रत सफ़ियुल्लाह आदम[अ०] के हाथों हुई। (किताबुल अअ्लाम, पेज-13)

तीसरी तामीर औलादे आदम के हाथों हुई और चौथी तमीर हज़रत इब्राहीम ख़लीलुल्लाह[अ०] के हाथों से है जिसके बारे में अल्लामा क़ुतुबुद्दीन हनफ़ी लिखते हैं:

हज़रत इब्राहीम[अ०] तामीर करते थे और इस्माईल[अ०] अपने कन्धे पर पत्थर उठा-उठा कर लाते थे। जब दीवार ऊची हो गई तो हज़रत इब्राहीम[अ०] पत्थर पर खड़े होते और तामीर करते थे। और इस्माईल[अ०] चारों तरफ उन पत्थरों को लगाते थे यहाँ तक कि हजरे अस्वद की जगह तक पहुँचे। इब्राहीम[अ०] ने इस्माईल[अ०] से कहा कि एक पत्थर लाओ ताकि उसको यहाँ रख दूँ, वह लोगों के लिए निशानी रहेगा कि इसी से तवाफ की शुरुआत करें। तो फिर इस्माईल[अ०] ढूँढने के लिए गये इधर जिब्रईल[अ०], इब्राहीम[अ०] के पास हजरे अस्वद को ले आये, ख़ुदा ने तूफ़ाने नूह के ज़माने में उसे अबुक़बीस पहाड़ में दबा दिया था जिब्रईल[अ०] ने उसे इस जगह पर रखा और इब्राहीम[अ०] ने उस पर तामीर की और हजरे अस्वद उस ज़माने में अपनी रौशनी से दुनिया को चारों तरफ रौशन किये हुए था।'' (किताबुल अअ्लाम, पेज-14)

इस इन्तिज़ाम और एहतेमाम से ख़ुदा के हुक्म से जिस घर की तामीर हुई हो उसकी इज़्ज़त व अज़्मत का क्या पूछना? बल्कि इस सूरते हाल से साफ़ ज़ाहिर है कि काबे की इज़्ज़त और उसकी बड़ाई मुसलमानों के क़िब्ला होने के बाद से नहीं है बल्कि पहले दिन से जबकि ख़ुदा बड़ाई और इज़्ज़त बाँट रहा था उस वक़्त पूरे आलम में काबा इज़्ज़त वाला और मुम्ताज़ हो गया था और उसको इज़्ज़त और बड़ाई हासिल हो चुकी थी। काबे में बुतों के रख देने से काबे की बड़ाई कम नहीं हो सकती बल्कि ये मक्के के काफ़िरों की नासमझी और नाक़दरी थी कि उन्होंने ऐसी बरकत और इज़्ज़त वाली जगह को अपने हाथों से बनाये हुए बुतों के लिए मुन्तख़ब किया और हक़ीक़त में अगर ग़ौर किया जाए तो इसकी वजह भी काबे की इज़्ज़त और बड़ाई ही थी चूँकि सभी नबियों और रसूलों की ज़बान से काबे की अज़्मत कानों में पड़कर दिलों में बैठ गई थी इस वजह से उन लोगों ने अपने माबूदों के लिए इस घर से बेहतर कोई जगह न पायी लेकिन इसकी वजह से काबे की अज़्मत को कोई चोट नहीं पहुँच सकती।

फ़त्हे मक्का 8 हिजरी में हुई और बुतों को उसी साल निकाला गया है। यह रसूल[स०] की ज़िन्दगी का तक़रीबन आख़री दौर था। ऐतेराज़ करने वाले के मुताबिक़ इसके पहले काबा बुतख़ाना था और बैतुलमुक़द्दस से काबे की तरफ क़िब्ला बदल देना इससे बहुत पहले का वाक़िआ है। तो क्या कहा जा सकता है कि ख़ुदा ने एक बुतख़ाने को मुसलमानों का क़िब्ला बना दिया।

इसी तरह हज वाजिब होने की आयत भी 6 हिजरी में उतरी जो बुतों के गिराये जाने से तीन साल पहले का वाक़िआ है तो क्या ख़ुदा ने बुतख़ाने का हज और तवाफ मुसलमानों पर वाजिब किया था?

अब्दुल मुत्तलिब के ज़माने में अब्रहा का हमला और अस्हाबे फ़ील की चढ़ाई और ख़ुदा की क़ुदरत से अबाबीली लश्कर के हाथों उसकी तबाही क़ुरआने मजीद के पन्नों में मौजूद है। क्या ख़ुदा की तरफ से एक बुतख़ाने की हिफ़ाज़त यूँ ही की जाती है?

मालूम हुआ कि बुतों के रख देने से काबे की इज़्ज़त घट नहीं गई थी। इसी वजह से काबे को क़िब्ला बनाने और उसका हज वाजिब करने में बुतों के हटने का इन्तिज़ार नहीं किया गया और अब्रहा के हमले से हिफ़ाज़त भी बुतों के निकाले जाने पर रुकी नहीं रही।

काबा बैतुल्लाहिल हराम था जिसका हज और तवाफ हमेशा से वाजिब है और चूँकि पूरी काएनात में अफ़ज़ल व बेहतर था ख़ुदा की तरफ से अमीरुलमोमिनीन की विलादत के लिए चुना गया और उसने अपनी क़ुदरत और हिकमत से बन्द दरवाज़े को छोड़कर नया दर बनाया और अपने ख़ास बन्दे की पैदाइश के लिए अपने ख़ास घर को ख़ाली कर दिया और मज़ा ये है कि काबे के दामन पर बुतख़ाना कहकर जो धब्बा लगाया गया था उसके छुड़ाने का सेहरा भी उसी पैदा होने वाले के सर बंधा और नबी[स०] के कन्धों पर क़दम रखकर बुतों का तोड़ा जाना उसी हस्ती की बड़ाइयों का मुख़्तसर सा हिस्सा है।

दूसरा एतेराज़

''पैदाइश के वक़्त औरत जिस तरह की गन्दगियों से घिरती है वह किसी तरह काबे की पाकी और इज़्ज़त से मुनासिबत नहीं रखते, इसलिए ये रिवायत मानने के क़ाबिल नहीं है।''

ये सवाल हक़ीक़त में ख़ुदावन्दे आलम पर एतेराज़ की शान रखता है। इसके बाद कि शिया और सुन्नी दोनों फ़रीक़ों की किताबों से ये मतलब बिल्कुल साबित है कि अमीरुलमोमिनीन अली[अ०] की पैदाइश ख़ुदावन्दे आलम के हुक्म से काबे के अन्दर हुई और फ़ातिमा बिन्ते असद को ख़ुदावन्दे आलम ने अपनी क़ुदरते कामिला के साथ काबे के अन्दर जगह दी थी तो अब इस सवाल का मौक़ा ही नहीं रहता कि काबा पाक है और पैदाईश के वक़्त औरत नजासत वाली होती है।

एतेराज़ करने वाले की नज़र में दुनिया का चलने वाला निज़ाम (सिस्टम) बदला नहीं जा सकता और ख़ुदावन्दे आलम उसके बदलने से आजिज़ है और ख़ुदा की क़ुदरत का दायरा छोटा है। जिन चीज़ों का होना अक़्ल में नहीं आता है उनसे बेशक क़ुदरत का ताल्लुक़ नहीं होता लेकिन जिन चीज़ों का होना अक़्ल के हिसाब से नामुमकिन न हो और इमकानी हदों के अन्दर हों उनका आदत के निज़ाम के ख़िलाफ़ होना किसी अक़ली हिदायत या नज़रिये के ख़िलाफ़ नहीं है।

पैदाईश के वक़्त औरतों का मामूली नजासतों में पड़ जाना आम निज़ाम (सिस्टम) में सही ज़रूर है मगर अक़ली एतेबार से ज़रूरी नहीं है और न इसके ख़िलाफ़ कोई अक़ली फैसला मौजूद है। ऐसी सूरत में जब ख़ुदावन्दे आलम ने फ़ातिमा बिन्ते असद को अपने हुक्म से काबे के अन्दर दाख़िल किया और उस पैदाईश को वहाँ होने दिया तो समझ लेना चाहिए कि उसने अपने पाक और अज़मत वाले घर की पाकी का ख़याल रखा है।

अगर क़ुरआन और हदीस की रौशनी में नज़र की जाए तो मालूम होगा कि ये वह बच्चा था जिसकी पाकी का ख़ुदावन्दे आलम अपनी ताक़त के साथ ज़िम्मेदारी ले चुका था। और उसकी पाकी पर न टलने वाला हमेशा का इरादा क़ायम था और इसी बुनियाद पर इस्लामी हदीस की किताबों में ऐसी खुली बातें मौजूद हैं जो इस मुक़द्दस ज़ात की ग़ैर मामूली पाकीज़गी का पता देती हैं। चुनानचे अल्लामा मनादी मिसरी ने क़ुनूज़ुद्दक़ाएक़ में जनाब रिसालत मआब[स०] से रिवायत की है: ''किसी शख़्स को जाएज़ नहीं है कि वह मस्जिद में नापाक हो सिवाए मेरे या अली[अ०] के''

और अबूसईद ख़ुदरी की रिवायत है ''हज़रत रसूल[स०] ने फ़रमाया ऐ अली[अ०] किसी शख़्स के लिए हलाल नहीं है कि वह इस मस्जिद में नापाक हो सिवाए मेरे और तुम्हारे।''

और शैख़ सुलेमान बल्ख़ी क़ुन्दूज़ी ने यनाबीउल मवद्दह् में रिवायत की है कि हज़रत रसूल[स०] ने एक लम्बी हदीस में फ़रमाया: ''बेशक अली मेरे लिये वैसे ही हैं जैसे मूसा के लिये हारून और वह मुझ से है और किसी के लिए जायज़ नहीं है इसमे औरतों से निकाह के सिवाए अली और उनकी औलाद के''

इस तरह की बहुत सी हदीसें अहलेसुन्नत की किताबों में मौजूद हैं और इनके अलावा अगर उन हदीसों पर नज़र की जाए जिनमें जनाबे फ़ातिमा ज़हरा[स०] के बतूल नाम होने की वजह बयान की गई है तो साफ़ तौर पर मालूम होता है कि इन लोगों की पाकी इस हद पर थी कि उन वक़्तों में जिन वक़्तों में आम लोग नापाक समझे जाते हैं उनमें भी इन लोगों की पाकी अपनी हालत पर बाक़ी रहती थी और इन लोगों के दामन पर नापाकी का गुज़र नहीं था।

फिर इन हदीसों को देखते हुए जो मुस्तनद इस्लामी किताबों में मौजूद हैं ख़ान-ए-काबा में अमीरुलमोमिनीन की पैदाईश में कौन सा ज़ुल्म हो सकता है? पैदा होने वाला जब इतना पाक और मासूम था तब ही ख़ालिक़े काएनात की तरफ़ से ख़ान-ए-काबा को जिसकी पाकी का इब्राहीम[अ०] और इस्माईल[अ०] को हुक्म हो चुका था और ''तह्हिरा बैइती'' कह कर उसकी पाकी का एहतेमाम जता दिया गया था उसकी विलादत के लिए ख़ाली कर दिया गया और बैतुल्लाह में अल्लाह के वली की पैदाइश हुई।

तीसरा एतेराज़

''ये रिवायत अहलेसुन्नत की किताबों में नहीं है''

(बक़िया पेज-14 पर)

इमाम मुहम्मद तक़ी अ० और इमाम अली नक़ी अ०

प्रोफ़ेसर अल्लामा अली मुहम्मद नक़वी साहब क़िब्ला
अनुवादकः बिन्ते ज़हरा नक़वी ''नदल हिन्दी'' साहेबा

इमामे मुहम्मद तक़ी : ताजदारे तक़्वा

आपका नाम मुहम्मद बिन अली है मगर इमामे जवाद या इमामे तक़ी के लक़ब से मशहूर हैं। आपको ''अबु जाफ़रे सानी'' भी कहा जाता है। आप आसमाने विलायत व इमामत के नवें चमकदार सितारे हैं। आपकी विलादते बा सआदत 195हि० में हुई। आपने अपनी इमामत का आग़ाज़ नौ साल की उम्र में किया।

एक शक का जवाब

इमाम ने किस तरह नौ साल की उम्र में उम्मत की रहबरी की ज़िम्मेदारियाँ अपने ज़िम्मे लीं? और ये किस तरह मुमकिन है कि इतनी कम उम्री में वह उम्मत की रूहानी, तहज़ीबी और सियासी ज़िम्मेदारी को पूरा कर सकें?

इस सवाल के जवाब में हमें इमामत के इरफ़ानी और मावराए तबीआत अबआ़द पर नज़र रखनी होगी। अइम्मा और अम्बिया तजल्ली फ़ैज़े खुदावन्दी हैं जो खुदावन्दे तआला के मख़सूस अलताफ़ से बहरावर होते हैं। खुदा की इनायात से इमाम पैदाइश के वक़्त ही से ख़ास मलका, ग़ैर मामूली रूहानी ताक़तों का हामिल होता है। इमाम और नबी चूँकि बराहे रास्त इल्मे इलाही और इनायते मख़सूस के चश्मे से फ़ैज़याब होते हैं इसलिए ''इल्मे वहबी'' के मालिक होते हैं और हवासे ख़म्सा और तरबियत के अलावा इल्म और मारेफ़त के दूसरे चश्मों तक भी उनकी रसाई होती है और उनका मुक़ाबला आम इन्सानों के साथ नहीं किया जा सकता, क्योंकि जो शख़्स सूरज की रौशनी अपनी आँखों से देख चुका हो वह इस बात का मुहताज नहीं होता कि कोई उसे सूरज के निकलने की ख़बर पहुँचाए। ऐसी सूरत में अगर अइम्मा में से कोई इमाम नौ साल की कमसिनी में ही इमामत के ओहदे पर फ़ाएज़ हो जाता है तो इसमें ताज्जुब की कोई बात नहीं है।

क़ुरआने करीम हज़रत ईसाअ० के बारे में बताता है कि वह गहवारे में भी नबी थे और उन्होंने अपनी नुबुव्वत का एलान खुद इन अलफ़ाज़ किया थाः- ''मैं खुदा का बन्दा हूँ और मुझे किताब और नुबुव्वत अता हुई है।'' (सूर-ए-मरियम-30)

अइम्मा भी इसी सिन्फ़ से हैं, इसलिए कम से कम किसी मुसलमान को ये बात समझने में कोई दुश्वारी पेश नहीं आना चाहिए कि इमाम मुहम्मद तक़ीअ० नौ साल की उम्र में इमामत के ओहदे पर किस तरह फ़ायज़ हो गये।

हमारे बारह इमामों में इमाम मुहम्मद तक़ीअ० ने उम्र के लेहाज़ से इस दुनिया में बहुत कम दिन गुज़ारे। जब उन्हें ज़हर दिया गया, उस वक़्त उनकी उम्र सिर्फ़ पच्चीस बरस थी (195हि० से 220हि० तक) मगर ये ज़िन्दगी जिस क़दर भी है, एक ''क़ुव्वत'' है एक ''ताक़त'' है और इसका राज़ ज़िन्दगी के मेयार में है न कि मिक़दार में। क्योंकि इसका पैमाना ज़िन्दगी के साल की गिन्ती नहीं है बल्कि ज़िन्दगी किस उनवान से गुज़री है। हो सकता है कि किसी ने इमाम जवादअ० की तरह से मुख़तसर ही ज़िन्दगी गुज़ारी हो मगर मेयार और तासीर के लेहाज़ से लाखों इन्सानों की सालहा साल की ज़िन्दगी से कहीं ज़्यादा हो।

इमाम मुहम्मद तक़ीअ० का दौर मुख़तसर होने के बावजूद निहायत तलातुमख़ेज़ लेकिन समरबार था। नवें इमाम का दौर 203हि० से 220हि० तक है। ये दौर परेशानियों और मुसीबतों का दौर था जो शियों की आज़ादी के दौर के बाद शुरु हुआ।

उस ज़माने के सियासी हालात

उस ज़माने में शिया इस्लामी दुनिया में सबसे बड़ी इन्क़ेलाबी ताक़त और हुकूमते वक़्त के लिए अज़ीम

तरीन ख़तरा समझे जाते थे और लाखों की अवाम में अइम्म-ए-अहलेबैत की मक़बूलियत हुकूमत को ख़ौफ़ज़दा कर रही थी।

इमाम मुहम्मद तक़ी[अ०] की इमामत से चन्द साल पहले इराक़ में शियों की ज़बरदस्त तहरीक की शुरुआत हुई। जमादिस्सानी 199[हि०] के अवाख़िर में सादाते हुसैनी में से, मुहम्मद बिन इब्राहीम ने जो इब्ने तबातबाई के नाम से मशहूर हैं, कूफ़ा में एक ज़बरदस्त इन्क़ेलाब की रहबरी की। ये लोग 199[हि०] के माह रजब में इस क़दर मज़बूत और मुनज़्ज़म हो गये थे कि ज़ुहैर बिन मुसैय्यिब की सरकरदगी में हुकूमत की जो फ़ौज उनकी सरकोबी के लिए गई थी, उसे इन लोगों ने बुरी तरह मार भगाया। 200[हि०] में सरज़मीने हेजाज़ पर मुहम्मद दीबाज़ बिन इमाम जाफ़रे सादिक़[अ०] की सरकरदगी में शियों ने इन्क़ेलाब बरपा किया और कुछ अरसे तक इस इलाक़े पर अपनी हुकूमत क़ायम रखी। 202[हि०] में कूफ़ा में एक दूसरी हमागीर तहरीक उभरी जिसकी रहबरी अब्दुल्लाह, अबी सराबा के भाई कर रहे थे और इस तहरीक के पुश्तपनाह भी शिया ही थे इनकी मानवी रहबरी के फ़राएज़ अली बिन मुहम्मद बिन इमाम जाफ़रे सादिक़[अ०] अन्जाम दे रहे थे।

यमन में भी शिया तहरीकें ज़ोर पकड़ रही थीं। 200[हि०] में इब्राहीम बिन इमाम मूसा काज़िम[अ०] ने ज़बरदस्त इन्क़ेलाब बरपा किया और पूरे यमन में अलवियों की हुकूमत क़ायम कर दी और 208[हि०] में अब्दुर्रहमान बिन अहमद अलवी की सरकरदगी में एक और तहरीक उभर आयी।

ये तमाम तहरीकें और इन्क़ेलाबात बताते हैं कि शिया मज़बूत और ज़ालिम व जाबिर हाकिमों के लिए ज़बरदस्त ख़तरा थे।

ख़िलाफ़ते अब्बासिया को अच्छी तरह मालूम था कि इमाम रिज़ा[अ०] और इमाम जवाद[अ०] मुसलमानों में बेहद मक़बूल और महबूब हैं।

तारीख़ में बहुत से शवाहिद ऐसे मिलते हैं जिनसे ज़ाहिर होता है कि कमज़ोर अवाम की अज़ीम अक्सरियत की हमदर्दियाँ पूरे आलमे इस्लाम में शिया अइम्मा और शीईयत के साथ थीं। तबरिसी नक़्ल करता है कि हुसैन बिन हसन जो अलवी इन्क़ेलाबियों में थे और "वाली" के नाम से मशहूर थे, हज के ज़माने में जब मक्का आये तो मैंने देखा कि ख़िलाफ़ते अब्बासिया के गवर्नर दाऊद बिन ईसा ने पहले तो इनसे जंग का इरादा किया मगर फिर इस ख़याल से बाज़ आ गया। बक़ौल तबरी वह डर गया कि हज के ज़माने में मुख़तलिफ इलाक़ों से आये हुए हज़ारों मुसलमानों की मौजूदगी में अगर वह ऐसा करता है तो सारे के सारे मुसलमान शिया सरदार की हिमायत में उठ खड़े होंगे। (तबरी, जि-7 पेज-121)

ये एक तारीख़ी गवाह है जो वज़ाहत के साथ ज़ाहिर करता है कि खिलाफ़ते अब्बसिया इस बात से आगाह थी कि अवाम की अकसरियत शियों की हामी थी।

इन हालात में शिया इन्क़ेलाबी ताक़त और अवाम में अइम्म-ए-अहलेबैत की महबूबियत के पेशेनज़र मामून मजबूर था कि इमामे रिज़ा[अ०] को अपना वलीअहद मुक़र्रर करे और ये एलान करे कि हम सियासी इक़्तेदार उसके सही हक़दार यानी अइम्म-ए-अहलेबैत की जानिब मुन्तक़िल कर रहे हैं। इमाम रिज़ा[अ०] की वलीअहदी 201[हि०] में अमल में आयी। हक़ीक़त में मामून का अमल एक तरफ तो शिया तहरीक और इन्क़ेलाब को दफ़ा करने की चाल थी, दूसरी तरफ वह अइम्मा की मक़बूलियत से सियासी फ़ायदा हासिल करना चाहता था मगर इमामे रिज़ा[अ०] की वली अहदी से हुकूमत पर ये हक़ीक़त रौशन हो गयी कि शियों की हरदिल अज़ीज़ी नीज़ सियासी और अवामी क़ुव्वत बढ़ती जा रही है और सियासी नुक़त-ए-नज़र से शिया जो पहले की बनिस्बत इस्लामी मआशरे के क़वी तरीन उन्सुर बन चुके थे इमामे रिज़ा[अ०] की वली अहदी के बल बूते पर किसी वक़्त भी इक़्तेदार पर क़ब्ज़ा जमा सकते हैं। यही वजह थी कि हुकूमत ने इमाम रिज़ा[अ०] को ज़हर दिलवाया और तीन इमामों को एक के बाद एक यानी इमाम मुहम्मद तक़ी[अ०], इमाम अली नक़ी[अ०] और इमाम हसन असकरी[अ०] को क़ैदो बन्द की ज़िन्दगी गुज़ारनी पड़ी। मामून की सियासी रविश की ख़ुसूसियत ये थी कि वह क़ुव्वत से ज़्यादा "दिखावे" पर भरोसा करता था।

इमाम मुहम्मद तक़ी[अ०] के मुक़ाबले में मामून की तीन तरफ़ा चाल

इमाम रिज़ा[अ०] की शहादत के बाद, इमाम जवाद[अ०] के मुक़ाबले में मामून ने तीनतरफ़ा चाल इख़्तियार की। पहले इमाम से अपना नसबी ताल्लुक़ ज़ाहिर करके उनकी मक़बूलियत और महबूबियत को अपने मफ़ाद में इस्तेमाल करना चाहता था। इसकी इसी सियासत ने

अपनी बेटी ''उम्मुल फ़ज़्ल'' का अक़्द इमाम जवाद^{अ०} से करने पर उकसाया। मामून का ये इक़दाम इमाम रिज़ा^{अ०} के अवामी असर व नुफ़ूज़ को ज़ाहिर करने के लिए काफ़ी है कि मामून जैसा साहेबे इक़्तेदार ख़लीफ़ा अपनी ख़िलाफ़त और अपने इक़्तेदार के तहफ़्फ़ुज़ की ख़ातिर इस बात पर मजबूर हो गया कि इमाम से नसबी क़राबत ज़ाहिर करे।

मामून की दूसरी सियासत ये थी कि वह बराबर इमाम को अपनी नज़रों के सामने बतौर क़ैदी रखना चाहता था ताकि उनकी हरकात व सकनात की पाबन्दियाँ आयद रखे और वह अपने अवामी असर व नुफ़ूज़ और मक़बूलियत के सहारे हुकूमत के ख़िलाफ़ कोई इन्क़ेलाब बरपा न कर सकें और जैसा कि किताबों में आया है मामून का इमाम मुहम्मद तक़ी^{अ०} को अपनी दामादी में लेने का मक़सद एक हिफ़ाज़ती इक़्दाम भी हो सकता है। इस तरह वह चाहता था कि घरेलू माहौल में भी इमाम के हरकात व सकनात पर कड़ी नज़र रखी जाए। इमाम जवाद^{अ०} का उम्र भर इस तरह हुकूमत की कड़ी निगरानी में रहना इस बात का शाहिद है कि अब्बासियों को इमाम से बहुत ज़्यादा डर और ख़ौफ़ था।

तीसरी बात, मामून इस कोशिश में था कि इमाम की रूहानी शबीह को मिटा दे ताकि अवाम में उनका असर व नुफ़ूज़ कम हो जाए। इमाम मुहम्मद तक़ी की इमामत के आग़ाज़ में मामून ने दरबार में जो मुनाज़रे कराये और जिनमें इल्मुल कलाम, फ़िक़्ह और फ़लसफ़े के ज़बरदस्त माहिरों से इमाम का मुक़ाबला कराया, उनका मक़सद यही था। मामून को उम्मीद थी कि इमाम जवाद जो उम्र के लेहाज़ से कमसिन थे, उन तजरबाकार और पेशेवर मुनाज़िरबाज़ों से शिकस्त खा जायेंगे और हुकूमत उनकी शिकस्त को उनकी कम इल्मी और फ़िक्री कोताही के तौर पर मशहूर करके उनकी अवामी मन्ज़िलत को हिला दे। चुनानचे इसी सिलसिले में एक तारीख़ी मुनाज़रे में मामून ने यहया बिन अक्सम को आमादा किया कि वह इमाम से सख़्त क़िस्म के सवालात करे मगर वह इमाम के मन्तिक़ी इस्तेदलाल के सामने बेबस हो गया। मामून इस हक़ीक़त से अन्जान था कि वह खुदाई रहबर हैं और मलकूती इल्म के सरचश्मे से बराहे रास्त कस्बे फ़ैज़ करते हैं।

मामून की मौत के बाद मुअ्तसिम के बरसरे इक़्तेदार आते ही इमाम के लिए ज़ुल्म और तशद्दुद में इज़ाफ़ा हो गया। मामून ने धोके और मक्कारी का उसूल अपनाया था मगर मुअ्तसिम ताक़त इस्तेमाल करने का क़ायल था चुनानचे उसके ज़माने में शियों पर ज़ुल्मो जौर और उनके क़त्ल और ख़ून में इज़ाफ़ा हो गया और मुअ्तसिम की ही साज़िश के नतीजे में ''उम्मुल फ़ज़्ल'' ने 220$^{हि०}$ में इमाम को ज़हर देकर शहीद कर दिया।

इमाम अली नक़ी अ0 :
मुतवक्किल से मुक़ाबले के सूरमा

दसवें इमाम का नाम ''अली'', कुनियत ''अबुलहसन'' और लक़ब ''नक़ी'' और ''हादी'' था। आपकी विलादत 214$^{हि०}$ में मदीने में हुई। आपके मुबारक सर पर सिर्फ़ छः साल तक इमाम जवाद^{अ०} के शफ़क़ते पिदरी का साया रहा। इमाम जवाद यानी हज़रत मुहम्मद तक़ी^{अ०} की इराक़ जिलावतनी और आपकी शहादत के बाद उम्मत की रहबरी की अज़ीम ज़िम्मेदारी का बार आप ही के कन्धों पर आ पड़ा।

मुअ्तसिम की ख़िलाफ़त में आपकी इमामत का दौर शुरु हुआ। 228$^{हि०}$ में मुअ्तसिम की मौत हुई और इसके बाद वासिक़ बिल्लाह तख़्तनशीन हुआ। इसकी मौत के बाद खुलफ़ाए अब्बासिया का बड़ा ज़ालिम और जाबिर ख़लीफ़ा बरसरे इक़्तेदार आया। वह 250$^{हि०}$ तक ज़िन्दा रहा। इमाम के मुक़ाबले में हुकूमत की चाल मुतवक्किल के तारीक दौर में खुलकर सामने आयी।

ज़माने, नतीजों और हालात के लेहाज़ से इमाम हादी^{अ०} का दौर इमाम जवाद^{अ०} के दौर से मिलता-जुलता है। मुतवक्किल के बरसरे इक़्तेदार आते ही अब्बासी हुकूमत का ज़ुल्म तरक़्क़ी की आख़री मंज़िल पर पहुँच गया। शियों को जो अब्बासियों के ज़ुल्मो सितम और फ़साद के मुक़ाबले पर एक जंगी मोर्चा तैयार किये हुए थे, हुकूमत ने ख़त्म कर देने का इरादा किया। शिया भी अब्बासी हुकूमत को हिलाने का कोई मौक़ा हाथ से जाने नहीं दे रहे थे। यहाँ तक कि मुतवक्किल के दौर से क़ब्ल 219$^{हि०}$ में मुहम्मद बिन क़ासिम बिन उमर बिन अली बिन अबी तालिब ने आख़री और सबसे बड़ा शीआी इन्क़ेलाब बरपा किया। मुहम्मद बिन क़ासिम का इन्क़ेलाब ''रिक़्क़ा'' के इलाक़े से शुरु हुआ। चालीस हज़ार जंगजू

शिया उनके साथ थे। मुहम्मद बिन क़ासिम ने अपना मरकज़ ख़ुरासान में "मर्व" के मक़ाम पर कोहे हरीर के क़िले हसिया में मुन्तक़िल किया फिर उसके बाद तालिक़ान को अपना मरकज़ बना लिया। उन्होंने तालिक़ान ही को अपना ठिकाना बना लिया और ईरानी इलाक़ों के लोग उन से मुन्सलिक हो गये। ख़लीफ़ा मुअ्तसिम ने हुसैन बिन नूह की सरकरदगी में इन्क़ेलाबियों की सरकोबी के लिए फ़ौजें भेजीं। मगर उसकी फ़ौजें इन्क़ेलाबी मुसलमानों की क़ुव्वते ईमान से मुक़ाबले की ताब न ला सकीं और एक ख़ूँरेज़ जंग में बुरी तरह शिकस्त खाकर तितर-बितर हो गयीं। इसके बाद जंगों में भी जो फ़ौजें नूह बिन हयान बिन जबला और इब्ने ताहिर हाकिमे शहर की सरकरदगी में शिया इन्क़ेलाबियों की सरकोबी के लिए भेजी गयीं, शिया इन्क़ेलाबियों के हाथों शिकस्त खाकर वापस भाग गयीं। कुछ महीनों तक पूरे इलाक़े पर शिया इन्क़ेलाबियों का मुकम्मल क़ब्ज़ा रहा। इसके बाद दुश्वारियों और ज़हमतों का सामना करने के बाद अब्बासी हुकूमत इन्क़ेलाबियों की सरकोबी और क़ाएदे इन्क़ेलाब पर क़ाबू पाने में कामयाब हो सकी।

ज़ुल्म व इस्तेबदाद, फ़साद और इन्हेराफ़ के ख़िलाफ़ शियों के मुतावातिर और मुसलसल मुक़ाबले ने फ़ितरी तौर पर अब्बासी हुकूमत को इस बात पर मजबूर कर दिया था कि शिया अइम्मा को अपनी सख़्त निगरानी में रखे या उन्हें क़ैद में डाल दे और ज़्यादा से ज़्यादा उन पर ज़ुल्म व तशद्दुद करे।

तारीख़ी शवाहिद के मुताले से ज़ाहिर होता है कि इमाम जवाद की शहादत के बाद हुकूमते अब्बासी इमाम हादी से जो मुसलमानों की मानवी, फ़िक्री और इज्तेमाई रहबरी का फ़र्ज़ अन्जाम दे रहे थे बेहद हरासाँ थी। तारीख़ी मत्न में मन्कूल है कि मक्के और मदीने के इमामे जमाअत ने हुकूमत के नुमाइन्दे की हैसियत से मुतवक्किल को लिखाः "अगर तुम्हें मक्के और मदीने की ज़रूरत है तो अली बिन मुहम्मद (हादी) को इस इलाक़े से हटा ले जाओ क्योंकि उन्होंने इस इलाक़े के बेशतर लोगों को अपनी ताक़त और असर में ले रखा है।"

हुकूमते अब्बासी के दूसरे कारिन्दों ने भी दीगर मक़ामात से ख़लीफ़ा को इमाम हादी के बारे में इसी तरह की ख़बरें भेजीं जो अइम्मा की अवाम में महबूबियत और मक़बूलियत की मज़हर हैं। बग़दाद के महल में रहने वाले ज़ाहिरी इक़्तेदार के मालिक ख़लीफ़ा का इक़्तेदार दारुलहुकूमत के इलाक़ों तक महदूद था और उसके मुक़ाबले में मस्जिदुन्नबी में बैठने वाला और जनाब फ़ातिमा[स०] की मिट्टी के घर में रहने वाला अवाम की अकसरियत के दिलों पर हुकूमत कर रहा था। दूसरी बात ये है कि इससे ये हक़ीक़त भी मुनकशिफ होती है कि अइम्म-ए-उम्मत की मानवी व फ़िक्री रहबरी के फ़र्ज़ की अन्जामदही के साथ ही साथ सियासी तहरीक से भी ग़ाफ़िल नहीं थे। इस बात का ज़्यादा इमकान है कि तमाम इस्लामी हुकूमत के इन्क़ेलाबी शिया अपने रहनुमाओं के ज़रिये से अइम्मा ही से रहबरी हासिल करते थे और इसी मसले ने हुकूमत को इस हद तक अपनी तरफ मुतवज्जेह किया कि उसे अपनी आफ़ियत और अपना वजूद ख़तरे में महसूस होने लगा और मक्का और मदीना हाथ से जाता हुआ नज़र आने लगा। आख़िरकार नतीजा ये हुआ कि हुकूमत ने इमाम हादी[अ०] को जिलावतन करके सामर्रा के महल्ल-ए-असकर में हुकूमत के कारिन्दों की निगरानी में बीस साल तक रखा और इसमें कोई शक नहीं कि इन इक़दाम का सबब अवाम में इमाम का नुफ़ूज़ उनकी मक़बूलियत और उनका मुक़ाबले वाला किरदार था।

हुकूमत को इमाम हादी[अ०] को अपनी निगरानी में रखना पड़ा क्योंकि इमाम की मक़बूलियत अवाम में इस हद तक बढ़ गयी थी कि दारुलख़िलाफ़ा के बहुत से मक़ामात के लोग इमाम हादी की मानवियत के दीवाने हो गये थे। सुबूत के तौर पर हम इस वाक़िए को नक़्ल करते हैंः मुतवक्किल ने यह्या बिन हरैमा को मदीने से इमाम को सामर्रा लाने पर लगाया था। चुनानचे यह्या बिन हरैमा कहता है कि "जब मैं बग़दाद आया तो वालिए बग़दाद इसहाक़ बिन इब्राहीम ताहिरी ने मुझ से सिफ़ारिश की कि अगर अली इब्ने मुहम्मद तक़ी की ख़ाना तलाशी के मौक़े पर तुम्हें कुछ नज़र आया हो तो मुतवक्किल से न कहना और सामर्रा में भी मुतवक्किल के आदमी वसीफ़ तुर्की ने उनके हक़ में सिफ़ारिश की, इस बात से मुझे सख़्त ताज्जुब हुआ।"

तारीख़ी इस्नाद से ज़ाहिर होता है कि दारुलख़िलाफ़ह के कारिन्दे तक इमाम के हामी हो गये थे इन्हीं मसाएल ने हुकूमत को इमाम से इतना ख़ौफ़ज़दा कर दिया था कि मुतवक्किल ने बीस बरस तक अपनी ख़ुसूसी निगरानी में रखने के बाद ज़हर देकर उन्हें शहीद कर दिया।

ज़िन्दा-ए-जावेद का मातम

सैय्यिदुल उलमा के ख़ुतबे (9)

सय्यदुल उलमा की यह तक़रीर हाता मुमताज़ महल में 11 अक्टूबर 1954ई० मुताबिक़ 12 सफ़र 1374हि० को हुई

इक़बाल सुहैल का एतेराज़ मश्हूर है कि-

रोएं वह जो क़ायल हों ममाते शोहदा के
हम ज़िन्द-ए-जावेद का मातम नहीं करते

इसका तजज़िया किया जाए तो क्या होगा? ग़ौर कीजिये कि यह ममात और हयात जो शोहदा के लिए मौरिदे नफ़ी व सिबात हो सकती है क्या है?

ज़ाहिर है कि शोहदा की ज़िन्दगी वह माद्दी ज़िन्दगी नहीं है जिस लेहाज़ से शहादत से पहले उन्हें ज़िन्दा कहा जाता है और जो ज़ाहिरी तौर पर इस दुनिया से जुड़ी होती है इसलिए कि इस्लामी शरीअत में शोहदा की मीरास तक़सीम होती है। उनके बच्चे यतीम और उनकी बीवियाँ बेवा के हुक्म में होती हैं। अगर उनके लिए मौत का ख़याल किसी हैसियत से न किया जाए तो उनके बचे माल की तक़सीम उनके औलाद की यतीमी और उनकी बीवियों की बेवगी बिल्कुल बे बुनियाद होगी। हमारे मज़हबी नज़रिये से शहीद अगर इमाम है तो उसके बाद दूसरा इमाम हो जाता है हालांकि हयाते ज़ाहिरी में एक इमाम के होते हुए दूसरा इमाम मन्सब लेने वाला नहीं होता, बेवा के लिए दूसरे निकाह की इजाज़त जिस तरह शौहर की मौत के बाद है उसी तरह शहादत के बाद, हालांकि ज़िन्दगी में यह मुमकिन नहीं। मौत के अहकाम में सिर्फ़ ग़ुस्ल और कफ़न शहीद के लिए नहीं है। नमाज़े मैय्यित और दफ़्न लाज़िम है और ज़ाहिर है कि इसका भी ताल्लुक़ मौत के साथ है ज़िन्दगी के साथ नहीं।

जबकि शोहदा की ज़िन्दगी इस तरह की नहीं है तो मानना पड़ेगा कि यह ज़िन्दगी जिसे शोहदा के लिए साबित किया गया है। इरतेक़ाए रूहानियत का कोई ख़ास दर्जा है इस एतेबार से देखा जाए तो अल्लाह के औलिया में से किसी के लिए भी अगरचे इस्तेलाही तौर पर शहीद न हो तो मौत नहीं है। बल्कि हमेशा की ज़िन्दगी है जिसके दर्जे अल्लाह से क़रीब होने के एतेबार से अलग-अलग होंगे।

पैग़म्बरे ख़ुदा की हदीस है-

"जो आले मुहम्मदस० की मुहब्बत में मरा वह शहीद है"

बेशक फ़िक़्ही हैसियत से शहीद के अहकाम यानी ग़ुस्ल और कफ़न का साक़ित होना यह जंग के मैदान में शहादत पाने वाले के साथ ख़ास हैं। मगर शहादत के दर्जे का हासिल करना हर मोमिन के लिए मुक़द्दर है फिर जब हर मोमिन ईमान के लेहाज़ से मुर्दा नहीं है तो नबियों और रसूलों का क्या कहना चुनानचे सिवाए नजदी अक़ीदे वाले वहाबियों के बाक़ी सभी मुसलमान पैग़म्बरे ख़ुदा की हयात को मानते हैं। ख़ुद हज़रत की हदीस है कि "मेरी वफ़ात के बाद मुझ पर उसी तरह सलाम करना जैसे ज़िन्दगी में क्योंकि तुम्हारा सलाम दोनों हालतों में मुझे एक ही तरह से पहुँचेगा।"

कुछ इस्लामी आलिमों ने इसी लिए रसूलस० के रौज़े के पास बुलन्द आवाज़ से बात करने को मना किया है और कहा कि क़ुरआन मजीद में है कि "तुम अपनी आवाज़ें रसूलस० की आवाज़ों से नीची रखो और तुम रसूलस० से तेज़ आवाज़ में चिल्लाकर बात मत करो" इस हुक्म को जिस तरह उस ज़माने में पूरा किया जाता था इसी तरह अब होना चाहिए इसलिए कि रसूलस० ज़िन्दा हैं और हमारी आवाज़ सुनते हैं।

अब ऊपर दिये गये शेअ्र के मज़मून पर ग़ौर कीजिये। वह कहता है कि जो ज़िन्द-ए-जावेद हो उसका मातम नहीं करना चाहिए और यह पहले बयान हो चुका कि हमेशगी की ज़िन्दगी अच्छे आमाल से जुड़ी है तो इसका मतलब यह हुआ कि मातम के क़ाबिल उनकी मौत है जो बहुत ही बुरे आमाल वाले हों और अच्छे आमाल रखने वालों को मातम नहीं करना चाहिए।

अब जब कि इस शेअ्र से यह उसूल साबित होता है तो आइये इसे क़ुरआन के सामने पेश करें क्योंकि कहने वाला देखने में तो मुसलमान है और उसने जो कहा है वह सिर्फ़ शाएराना अन्दाज़ में नहीं है जिसे मुस्कुराने के साथ सिर्फ़ इस शाएराना मज़े को महसूस करते हुए नज़रअन्दाज़ कर दिया जाए। बल्कि उसने मन्तिक़ी अन्दाज़ में सुग़रा और कुबरा तैयार करके एक नतीजा निकाला है जिससे एक पूरी क़ौम के तरीक़े पर एतेराज़ करने का मक़सद है।

क़ुरआने मजीद की आयत सामने है इस मौक़े की जब फ़िरऔन और उसका लश्कर डूब गया तो इरशाद हुआ- ''न उन पर आसमान रोया और न ज़मीन ने गिरया किया। और न उन्हें अल्लाह की तरफ़ से ढील दी गयी।'' ज़ाहिर है कि यह इशारा है। जिससे उनके बुरे कामों को दिखाना मक़सद है। इशारे में किसी हक़ीक़त को बयान करके ज़हन को हक़ीक़त की तरफ फिराया जाता है न यह कि इसकी ज़िद को बयान किया जाए। जैसे यह बताना हो कि सुबह हो गयी, तो यह कहेंगे कि रौशनी हो गयी यह नहीं कहेंगे कि अन्धेरा हो गया जो कि शाम की निशानियों में से है। रात की शिद्दत दिखाना हो तो कहेंगे कि हाथ को हाथ नहीं सुझायी देता। जो अन्धेरे की ज़्यादती दिखाना है। अब देखिये शायर का नज़रिया यह था कि रोना उस पर नहीं चाहिए जो अच्छे आमाल वाला हो बल्कि उस पर रोया जाए जो बुरे आमाल वाला हो इसका मतलब यह है कि बुरे कामों का नतीजा है गिरया को लाज़िम करना, अच्छे कामों का नतीजा नहीं है। मगर क़ुरआन बुरे कामों के इज़्हार में कह रहा है: ''उन पर आसमान और ज़मीन ने गिरया नहीं किया'' इससे साबित होता है कि क़ुरआन के नज़रिये से बुरे कामों का तक़ाज़ा यह है कि उन पर न रोया जाए। इसके मुक़ाबले में जो अच्छे अमल करने वाले होंगे वह गिरया के मुस्तहक़ होंगे अब जितने बड़े दर्जे वाला इन्सान होगा, जितनी बरकतों और फ़ैज़ानों वाला हो वह दुनिया से उठे तो उसका उठना गिरये का मुस्तहक़ होगा। यूँ तो आम तौर से आसमान और ज़मीन की तरफ गिरये की निस्बत अक़्ली तौर पर हो सकती है जैसे ''वस्साएलुल क़रयह्'' यानी बस्ती वाले। हमारी रोज़ाना की ज़िन्दगी में पूरा शहर गवाह है। यानी शहर वाले, इसी तरह आसमान और ज़मीन रोते हैं यानी ज़मीन व आसमान वाले, मगर उठने वाले की पेशे ख़ुदा शख़सियत के लेहाज़ से कभी यह मजाज़ हक़ीक़त भी बन सकता है यानी मरने वाला जो दुनिया से उठा तो हक़ीक़त में वह ज़मीन रोयी और आसमान ने गिरया किया। फिर अगर ज़िन्द-ए-जावेद को आसमान व ज़मीन गिरया कर सकते हैं जिनका कोई काम ख़ुदा की मर्ज़ी के बग़ैर नहीं हो सकता तो उसका इन्सान भी मातम करें, तो यह ख़ुदा की मर्ज़ी के मुताबिक़ होगा।

फिर अब ये देखिये कि शहीदों के ज़िन्द-ए-जावेद होने का इल्म हमको किसके ज़रिये से हुआ। ज़ाहिर है कि पैग़म्बरे इस्लाम[स०] के ज़रिये से फिर इस ज़िन्दगी की ज़रूरतों के हम ज़्यादा जानकार होंगे या फिर इस्लाम? अब इस्लामी तारीख़ पर नज़र डालिये। बताइये जनाबे हमज़ा इब्ने अब्दुल मुत्तलिब[अ०] शहीद थे या नहीं? यक़ीनन शहीद और ऐसे शहीद कि पैग़म्बरे ख़ुदा[स०] ने सैय्यिदुश्शोहदा का लक़ब दिया तो फिर ज़िन्द-ए-जावेद होने में क्या शक मगर हमज़ा[अ०] की शहादत के बाद क्या हुआ, ग़म किया गया या ख़ुशी, आँसू बहाये गये या क़हक़हे लगाये गये। याद रखिये कि सुन्नत वही है जिसकी मिसाल रसूल[स०] के अमल में हो। और बिदअत वह है जो रसूल[स०] के अमल के ख़िलाफ हो। अगर हमज़ा[अ०] की शहादत पर रसूल[स०] हंसे होते तो रोना बिदअत होता लेकिन अगर रसूल[स०] रोये हैं तो फिर किसी शहीद पर रोना बिदअत न होगा, ख़ुशियाँ करना ही बिदअत क़रार पायेगा।

तारीख़ गवाह है कि जब जनाबे हमज़ा[अ०] की शहादत हो गयी है और सफ़िया हमज़ा[अ०] की बहन, भाई की ख़बर सुनकर ओहद के मैदान की तरफ चलीं और

रसूल[स॰] को इसकी ख़बर मिली कि सफिया आ रही हैं तो पहले आपने हज़रत अली इब्ने अबी तालिब[अ॰] से फरमाया कि जल्दी हमज़ा[अ॰] की लाश को छुपायें ताकि बहन की नज़र भाई के खुले जिस्म पर न पड़े। हज़रत अली[अ॰] ने जाकर अपनी चादर जनाबे हमज़ा[अ॰] की लाश पर डाली मगर जनाबे हमज़ा[अ॰] लम्बे थे, पाँव खुले रह गये तो आपने मैदान की घास इकटठा करके पैरों को छुपा दिया। इतनी देर में सफिया पहुँच गयीं। भाई की लाश पर गिरया शुरु किया इस मौक़े पर यह नहीं हुआ कि रसूल[स॰] सफ़िया को रोकते और इरशाद करते कि तुम्हारे भाई ज़िन्द-ए-जावेद हैं। ज़िन्द-ए-जावेद का मातम क्यों करती हो। बजाए इस फ़रमाने के खुद आप सफ़िया के साथ रोने में शरीक हो गये। और तारीख़ में यह जुमला है किः

"यब्की कुल्लमा बकत सफिय्यत व नशज कुल्लमा नशजत सफ़िय्यत"

नशज के माने अरबी में रोते रोते हिचकियाँ बंध जाने के हैं मतलब यह हुआ कि जितना-जितना सफ़िया रोती थीं। इतना-इतना रसूल[स॰] गिरया फ़रमाते थे यहाँ तक कि जब सफ़िया की रोते-रोते हिचकियाँ बंधी हुई थीं तो खुद पैग़म्बर[स॰] की भी यही हालत थी। अब बताइये ज़िन्द-ए-जावेद का मातम होता है या नहीं।

इसके बाद जब हज़रत[स॰] मदीना मुनव्वरा तशरीफ लाये और मस्जिद की तरफ जाते हुए सुना कि अन्सार के घरों में रोने की सदाएं बुलन्द हैं। उन रिश्तेदारों के ग़म में जो ओहद की जंग में शहीद हुए थे तो हज़रत ने फरमायाः अफसोस मेरे चचा हमज़ा[अ॰] पर रोने वालियाँ कोई नहीं" चूँकि जनाबे सफ़िया अपने घर में अकेली थीं, मिसाल मशहूर है "अकेला आदमी न रोता भला न हंसता" वह थोड़ी देर रोकर चुप हो गयी थीं हज़रत ने हसरत भरी यह बात कही तो इसकी ख़बर अन्सार की औरतों तक पहुँच गयी। वह उसे सुन कर जनाबे हमज़ा[अ॰] के घर आ गयीं और हमज़ा[अ॰] का मातम किया। यह ज़िन्द-ए-जावेद का मातम किसने करवाया, अल्लाह के रसूल[स॰] ने। अब किसी मुसलमान को इख़्तियार है कि वह इस मातम को अच्छा समझे या बुरा?

जनाबे जाफ़रे तैयार[अ॰] भी शहीद हुए। मूतह में उनके दोनों हाथ कटे, पैग़म्बरे ख़ुदा[स॰] ने मिंबर पर अपने ख़ुतबे में उनकी शहादत की ख़बर मुसलमानों को सुनायी। जो सैय्यिद-ए-आलम[स॰] के घर भी पहुँच गयी। जब हज़रत तशरीफ लाये तो देखा फ़ातिमा ज़हरा[स॰] रो रही हैं। रसूल[स॰] ने उन्हें भी नहीं फरमाया कि जाफर[अ॰] ज़िन्द-ए-जावेद हैं, रोती क्यों हो बल्कि आपने इरशाद फरमायाः

"जाफ़र[अ॰] ऐसे आदमी पर रोने वालों को रोना ही चाहिए"

लीजिये जनाब रसूल[स॰] ने एक आम उसूल का एलान कर दिया। अगर कहा होता कि जाफर[अ॰] पर ज़रूर रोना चाहिए तो वह एक जुज़्वी हुक्म होता। उसे सिर्फ मिसाल के तौर पर पेश किया जा सकता था मगर "अला मिस्ले जाफ़र" जाफर[अ॰] जैसे आदमी पर यह तो एक कुल्ली उसूल है। एक उसूल मेयार है। अब जाफर ऐसे की लफ़्ज़ के एक माने यह हो सकते हैं कि ऐसी ख़ूबियों वाले शख़्स पर तब भी साबित होगा कि हुस्ने आमाल का नतीजा है इस्तेहक़ाक़े गिरया जो क़ुरआन की आयत के बिल्कुल मुताबिक़ है। और दूसरे माने यह हो सकते हैं कि जिसको इस तरह मौत आती हो जैसे जाफर[अ॰] को आयी। यानी ख़ुदा के रास्ते में शहीद हुआ हो। तब तो साफ़-साफ़ यह उस उसूल का एलान है कि ज़िन्द-ए-जावेद ही का मातम किया जाना चाहिए। अब किस मुसलमान के लिये जाएज़ होगा कि वह कहे हम ज़िन्द-ए-जावेद का मातम नहीं करते। वह जब यह कहता है तो पैग़म्बरे ख़ुदा[स॰] के इरशाद से बग़ावत का एलान करता है। जो अगर समझबूझ कर है तो यक़ीनन इस्लाम के दायरे से ख़ारिज करने के लिए काफ़ी है।

ऊपर दिये गये अपने मज़कूरा बयान की रौशनी में अगर हम एक शेअ्र की शक्ल में इक़बाल सुहैल का जवाब देना चाहें तो यूँ कह सकते हैं:

क्या रोओगे उनको जो हलाके अबदी हैं
क्यों ज़िन्द-ए-जावेद का मातम नहीं करते

(यानी) क़ुरआन और हदीस तो यही कह रहे हैं कि ज़िन्द-ए-जावेद का मातम करना चाहिये।

अब अगर कुछ लोग इसे पसन्द नहीं करते तो वह उनका मातम करें जिन्हें अबदी हलाकत नसीब हुई

है मगर उनका ज़मीर भी शायद इसको पसन्द न करेगा।

कहा जाता है कि रोना बुज़दिली की निशानी है। मैं कहता हूँ कि किसी ख़तरनाक जंग में मौजूद रह कर ख़तरे के एहसास से रोना बुज़दिली की निशानी हो सकती है मगर किसी ख़तरनाक जेहाद में न शामिल होने पर रोना बिल्कुल बहादुरी और शुजाअत है। याद रखिये कि कर्बला के मुजाहिदीन ज़ख़्म खाते और ख़ून बहाते हुए गिरया नहीं करते थे। बल्कि वहाँ तो बुरैर और अब्दुर रहमान आपस में मज़ाक़ करते नज़र आते हैं। वहाँ तो अब्बास[अ०] और अली अकबर[अ०] का क्या कहना अली असग़र[अ०] तक मुस्कुराते हुए शहीद हुए हैं।

हाँ अब्बास[अ०] नहीं रोये और अली अकबर[अ०] नहीं रोए क्योंकि उन्हें ख़ून बहाने का मौक़ा मिल गया। मगर ज़ैनुलआबिदीन[अ०] उम्र भर रोये। क्योंकि ख़ुदा की मस्लेहत ने उनको इस क़ुर्बानी में शरीक होकर शहीद होने से मजबूर बना दिया था।

हमारी भी क़िस्मत नाज़ करती कि इस क़ुर्बानी में अमली हैसियत से शरीक होते तो फिर ख़ून बहाते। आँसू न बहाते। यह आँसू बहाना तो इस पर है कि इस सआदत को हासिल न कर सके। अब अगर इस तसव्वुर के साथ यह आँसू बहाये जा रहे हैं तो इनसे हिम्मत में कमज़ोरी पैदा नहीं हो सकती बल्कि इसका अमली नतीजा यह होगा कि हमें आरज़ू है। और बेचैनी से इन्तिज़ार कि अब जो दीन की मदद का अमली मौक़ा हमें मिल सके। इसमें अपनी मुमकिन और बा महल क़ुर्बानी से पीछे न हटें। ❁❁❁

बक़िया.......... हज़रत अली[अ०] की काबे में विलादत और ....

इसके लिए उन बड़े अहलेसुन्नत उलमा का नाम लिख देना काफ़ी है जिनका ज़िक्र करना इस रिवायत को इसके सही होने की ज़मानत है।

इब्ने मग़ाज़ली मुसन्निफ़े किताबे मनाक़िब, अल्लामा बदख़्शी मुसन्निफ़े नुज़ुलुल अबरार, कमालुद्दीन मुहम्मद बिन तलहा शाफ़ई मुसन्निफ मतालिबुस्सुऊल, मुल्ला मुहम्मद सालेह तिरमिज़ी कश्फ़ी मुसन्निफ़ मनाक़िबे मुरतज़वी, शैख़ अब्दुल हक़ मुहद्दिस देहलवी मुसन्निफ़ मदारिजुन्नुबुव्वह, मोलवी मुहम्मद मुबीन फ़िरंगीमहली मुसन्निफ़ वसीलतुन्नजात, सिब्ते इब्ने जौज़ी मुसन्निफ तज़किरा ख़वासुल उम्मह, अली बिन बुरहानुद्दीन शाफ़ई मुसन्निफ़ इन्सानुल उयून, मूफ़िक़ बिन अहम ख़्वारज़मी मुसन्निफ़ मनाक़िब, शाह वलियुल्लाह मुहद्दिस देहलवी साहेबे इज़ालतुल ख़िफ़ा।

आख़री बुज़ुर्ग यानी हिन्दुस्तान के बैहक़ी हज़रत मुहद्दिस देहलवी ने तो साफ़-साफ़ इस रिवायत के तवातुर की गवाही दी है और लिखा है:

''मुतावातिर ख़बरों से साबित है कि फ़ातिमा बिन्ते असद के बत्न से अमीरुलमोमिनीन की पैदाईश ठीक काबे के अन्दर हुई और आप जुमा के दिन 13 रजब आमुलफ़ील से तीस साल के बाद काबे में पैदा हुए और काबे के अन्दर कोई शख़्स आपसे पहले और आपके बाद पैदा नहीं हुआ।''

इस इबारत से जहाँ इस वाक़िए का तवातुर साबित होत है उसी तरह ये भी मालूम होता है कि यह फ़ज़ीलत हज़रत से ख़ास है और आपसे पहले और बाद किसी को ये इज़्ज़त नहीं मिली मगर क्या कहा जाए तास्सुब को कि जब अमीरुलमोमिनीन[अ०] की इस बड़ाई का इन्कार नक़्शे बर आब हो और इस्लामी तारीख़ ने धुनों पर हाथ रख दिया तो ये बात निकाली गयी कि ये क़िस्सा अमीरुलमोमिनीन की फ़ज़ीलत से ख़ास नहीं है बल्कि हकीम बिन हिज़ाम भी जाहिलियत में काबे के अन्दर पैदा हुआ था।

हम नहीं समझ सकते कि हज़रत शाह वलियुल्लाह मुहद्दिस देहलवी जैसे बड़े आलिम अपनी किताब में क्यों लिख देते हैं कि ''अली[अ०] के पहले और उनके बाद कोई शख़्स काबे में पैदा नहीं हुआ''।

और अख़तब ख़्वारज़मी मनाक़िब में लिखते हैं ''अली के पहले बैतुल्लाह में कोई शख़्स पैदा नहीं हुआ और ये वह बड़ाई है जिसको ख़ुदा ने बड़ाई और इज़्ज़त की वजह से आपके साथ ख़ास क़रार दिया''।

क्या ये लोग जाहिल थे? तंग नज़र थे? या शिया थे? या तारीख़ और हदीस से बेख़बर थे? यक़ीनन इन मुस्तनद उलमा की खुली बातों के बाद इस ख़याल की कोई हैसियत बाक़ी नहीं रहती। वस्सलाम ✸✸✸

इदारा

मुख्य समाचार

अमरीका ईरान के ख़िलाफ़ साज़िश रचने में मशगूल

आयतुल्लाह सै० अली ख़ामेना-ई की पुराने हरीफ़ पर तन्क़ीद

ईरान ने अपने पुराने मुख़ालिफ़, अमरीका के बारे में दावा किया है कि अमरीका दहशतगर्दी को बढ़ावा देने और इस्लामी जमहूरिया के ख़िलाफ़ हथियार और पैसा लुटाने और सज़िशें रचने में लगा हुआ है।

सियासी तजज़ियाकारों का ख़याल है कि ईरान के रूहानी पेश्वा आयतुल्लाह सै० अली ख़ामेना-ई की टेलीवीज़न पर प्रसारित की गयी तक़रीर से अमरीकी राष्ट्रपति बराक ओबामा की ईरान के साथ सीधे तौर पर राब्ता क़ायम करने की कोशिश को नुक़सान पहुँच सकता है। आयतुल्लाह ख़ामेना-ई ने इराक़ में अमरीकी फ़ौजों की मौजूदगी का ज़िक्र करते हुए कहा कि मैं पूरे यक़ीन के साथ ये कहता हूँ कि अमरीकी हमारी सरहदों पर ख़ासकर मग़रिबी सरहदों पर अमरीकी सज़िश करने में और दहशतगर्दी को बढ़ावा देने में लगे हुए हैं। उन्होंने मग़रिबी सूबे कुर्दिस्तान के दौरे के दौरान कहा कि वह हमारी मग़रिबी सरहदों पर पैसा और अस्लहा बांट रहे हैं और तन्ज़ीमों को इस्लामी जमहूरिया के ख़िलाफ़ लड़ने के लिए उकसा रहे हैं। उन्होंने कहा कि हमें इस साज़िश से होशियार रहना चाहिए।

आयतुल्लाह ख़ामेना-ई ने कुर्दिस्तान के आठ रोज़ा दौरे के ख़त्म होने पर कहा कि कुर्द अक्सरियत वाले इलाक़े के लिए अमरीका का ख़तरनाक मन्सूबा है।

यहाँ ये बात भी जानने लायक़ है कि कुर्द अलैहदगी पसन्दों के साथ ईरानी फ़ौजों की अक्सर झड़पें होती रही हैं। इसके लिए ईरान पहले भी इस्लामी जमहूरिया को इराक़ और तुर्की की तरह ग़ैर मुस्तहकम करने का इल्ज़ाम लगाता रहा है।

मग़रिब नवाज़ उम्मीदवारों को वोट न देने की तम्बीह

ईरान के सुप्रीम लीटर आयतुल्लाह सै० अली ख़ामेना-ई ने ईरानियों पर ज़ोर दिया है कि वह अगले महीने के सदारती इलेक्शन में उन उम्मीदवारों को वोट न दें जो मग़रिब नवाज़ रवैय्या इख़्तियार कर सकते हैं। आयतुल्लाह सै० अली ख़ामेना-ई ने अपने नशरियाती ख़िताब में कहा कि जो उम्मीदवार मग़रिब के आगे झुकते हैं, वह मुल्क के लिए शर्मिन्दगी की वजह हैं और उन्हें नहीं चुना जाना चाहिए। उन्होंने उन उम्मीदवारों को "ईरान का दुश्मन" क़रार दिया। कुर्दिस्तान के सूबे में बात करते हुए उन्होंने कहा कि अगर ईरानियों ने किसी ऐसे उम्मीदवार को चुन लिया जो बैनुलअक़्वामी तौर पर मक़ाम हासिल करने के लिए मग़रिबी मुल्कों की ख़ुशामद करता है तो ये मुल्क के लिए हादसा होगा। सुप्रीम लीडर ने ये नहीं कहा कि वह 12 जून के इन्तेख़ाबात में किसकी हिमायत करेंगे। राष्ट्रपति महमूद अहमदी नेजाद दूसरी मुद्दत के लिए इन्तेख़ाब में हिस्सा ले रहे हैं। पहली सदारती मुद्दत में उन्होंने अमरीका और दूसरी मग़रिबी ताक़तों की तरफ़ मोर्चा लेने का रुख़ इख़्तियार किया है। एक और सदारती उम्मीदवार मीर हुसैन मूसवी ने पीर के रोज़ एक अख़बार का प्रकाशन शुरु किया है जो ज़्यादातर सियासत पर मरकूज़ होगा।

अमीर हुसैन मूसवी पिछले प्रधानमंत्री है जिन्हें इस्लाहपसन्दों की हिमायत हासिल है। उन्हें अहमदी नेजाद का सबसे बड़ा मद्दमुक़ाबिल ख़याल किया जा रहा है। दूसरे उम्मीदवार पार्लियामेन्ट के पिछले स्पीकर महदी करोबी हैं जिन्हें इस्लाह पसन्द ख़याल किया जा रहा है और एक उम्मीदवार मुहसिन रज़ाई हैं जो पासदाराने इन्क़ेलाब के पिछले सरबराह हैं।

अज़ीम मजालिस

इन्शाअल्लाह इस साल सफ़वतुल उलमा मौलाना सै० कल्बे आबिद साहब ताबा सराह के ईसाले सवाब के सिलसिले की सालाना मजलिसें 3-4 अकटूबर को इमामबाड़ा ग़ुफ़रानमआब में होंगी। मोमिनीन से शिरकत की गुज़ारिश है।

लेबनान पर हमले का इस्राईल का घिनावना मन्सूबा

अगर हमला किया तो मुँहतोड़ जवाब दिया जायेगाः

सै० हसन नस्रुल्लाह

इस्राईल ग़ज़्ज़ा में फ़िलस्तीनियों के ख़िलाफ़ क़त्लेआम करने के बाद लेबनान में अपनी गुज़िश्ता शिकस्त की ज़िल्लत मिटाने और बदला लेने के लिए ख़तरनाक इरादे रखता है। हिज़्बुल्लाह लीडर हसन नस्रुल्लाह ने एलान किया कि इस्राईल डिफेन्स फ़ोर्स आने वाले दिनों में एक बड़ी फ़ौजी मश्क़ का मन्सूबा बना रही है लेकिन इस मश्क़ के बहाने इस्राईल लेबनान पर हमले की साज़िश कर रहा है। 'ये बात मुमकिन हो सकती है कि इस्राईल अचानक और हैरतअंगेज़ हमला करने की मन्सूबाबन्दी कर रहा हो। हम इससे ग़ाफ़िल नहीं हैं। और हमने दुश्मन को मुँहतोड़ जवाब देने की पूरी तैयारी कर ली है, "एक टेलीवीज़न बयान में हिज़्बुल्लाह चीफ़ हसन नस्रुल्लाह ने अपनी तैयारियों का ज़िक्र करते हुए कहा...

जून 2009ई० में इस्राईली डिफेन्स फोर्स एक बड़ी जंगी मश्क़ कर रही है। इस्राईल ने उसे यहूदी ममलकत की तारीख़ की सबसे बड़ी फ़ौजी मश्क़ क़रार दिया है। इस जंग का मक़सद इस्राईल अवाम को जंग के इमकान से बेदार और तैयार रखना और अपनी दिफ़ाई तैयारियों का जाएज़ा लेना है। ये बात इस्राईली डिफेन्स फोर्स के ज़राए ने कही लेकिन हिज़्बुल्लाह कमाण्डरों को डर है कि फ़ौजों और हथियारों के इस बड़े पैमाने पर तैनाती एक अचानक जंग का बहाना भी हो सकती है।

हिज़्बुल्लाह चीफ़ हसन नस्रुल्लाह ने इस्राईल को धमकी दी कि हिज़्बुल्लाह लड़ाकू हर ख़तरे का सामना करने के लिए पूरी तरह से तैयार हैं। "अगर इस मश्क़ के दौरान इस्राईल कोई अचानक हरकत करने का इरादा रखता है तो हम उसे ये पैग़ाम देना चाहते हैं कि हम तैयार हैं और इस्राईल एक बार फिर नाकाम रहेगा।" हसन नस्रुल्लाह ने कहा "हम अपने सर रेत में छुपाकर नहीं बैठे रहेंगे उन्होंने अपनी तैयारी के बारे में कहाः 2006ई० में इस्राईल ने जब लेबनान पर हमला किया था तब 34 दिनों तक जंग चली थी। 2 इग़वाशुदा इस्राईली फ़ौजियों की रिहाई के लिए शुरु की गई इस जंग में इस्राईल के डेढ़ सौ से ज़्यादा फ़ौजी मारे गये थे। और इस्राईल ने इस जंग में शिकस्त का एतेराफ किया और कई फ़ौजी कमाण्डरों को मुस्तफ़ी होना पड़ा। इस्राईल ने ग़ज़्ज़ा में अपनी फ़ौज कशी के बाद से ही लेबनान की तरफ़ बुरी नज़र क़ायम कर रखी है और इस्राईली फौज इन मश्क़ों के ज़रिये अस्ल में लेबनान पर हमलों की तैयारी कर रही है। ताकि मौक़ा मिलते ही लेबनान पर हमला किया जाए और 2006ई० की जंग का बदला लिया जाए। ये राय तजज़ियाकारों ने ज़ाहिर की है।

आयतुल्लाहिल उज़्मा मुहम्मद तक़ी बहजत की रिहलत - दुनियाए शीईयत सोगवार

ईरान के बड़े शिया आलिमे दीन मरज-ए-तक़लीद आयतुल्लाहिल उज़्मा शैख़ मुहम्मद तक़ी बहजत का 17 मई 2009ई० को दिल का दौरा पड़ने की वजह क़ुम के वली-ए-अस्र अस्पताल में 96 बरस की उम्र में इन्तेक़ाल हो गया। आयतुल्लाह बहजत ईरान के फ़ूमान सूबे में पैदा हुए थे और इस्लामी फ़िक़्ह के बड़े आलिम थे, उनकी तदफ़ीन क़ुम में 18 मई 2009ई० को हुई। उनके इन्तेक़ाल से इस्लामी दुनिया को नाक़ाबिले तलाफ़ी नुक़सान पहुँचा है। नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन में 18 मई 2009ई० को ये जाँसोज़ ख़बर सुनते ही ताज़ियती जलसा क़ाएदे मिल्लत मौलाना कल्बे जवाद की सदारत में मुनअक़िद हुआ जिसमें अराकीने नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन ने आयतुल्लाह मुहम्मद तक़ी बहजत की ज़िन्दगानी और ख़िदमात के मुख़तलिफ़ पहलुओं का तज़किरा किया। ख़ासकर क़ाएदे मिल्लत मौलाना कल्बे जवाद नक़वी साहब ने अपनी तक़रीर में कहा कि आयतुल्लाहिल उज़्मा शैख़ मुहम्मद तक़ी बहजत ताबा सराह एक फ़क़ीह थे, एक मुहक़्क़िक़, एक आरिफ़े कामिल और सबसे बड़ी बात एक अच्छे इन्सान थे।

इदारा इस अज़ीम हादसे पर इमामे ज़मानाअ० की ख़िदमत में ताज़ियत पेश करता है और मोमिनीन ने इल्तेजा करता है कि वह सूर-ए-फ़ातेहा की तिलावत फ़रमाकर आयतुल्लाह मुहम्मद तक़ी बहजत की रूह को ईसाल फ़रमायें।